International Journal of Academic Research and Development
ISSN: 2455-4197, Impact Factor: RJIF 5.22
www.academicsjournal.com
Volume 2; Issue 4; July 2017; Page No. 701-703

वैदिक संहिताओं में मरुद्गण : एक परिचय

वागीश मिश्र

शोध छात्र, संस्कृत विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश, भारत।

प्रस्तावना

वैदिक देवमण्डली में मरुद्गण अन्तरिक्ष स्थानीय देवता हैं। वैदिक देवताओं में इनका स्थान महत्वपूर्ण है। ऋग्वेद में तैंतीस सूक्त इनके स्वतंत्र रूप से प्राप्त होते हैं। इसके अतिरिक्त सात सूक्त इन्द्र के साथ व एक–एक अग्नि व पूषन् के साथ सम्मिलित रूप से प्राप्त होते हैं। प्रायः मरुद्गण इन्द्र के सहायक देव के रूप में प्रसिद्ध हैं परन्तु इनकी अपनी व्यक्तिगत विशेषताएँ भी कम नहीं हैं। मरुत्गणों को समर्पित सूक्तों में व परवर्ती साहित्यों में इनके असीम पराक्रम का भी वर्णन है।

प्रस्तुत शोध पत्र में मरुद् गणों की इन्हीं विशेषताओं पर विचार किया गया है–

'मरुत्' शब्द तीव्रता से प्रवहमान वायु या 'झंझावात' अर्थ का बोधक है। वैदिक संहिताओं में इनकी कल्पना एक देवता के रूप में नहीं अपितु कई देवों के एक समूह के रूप में की गई है। इनका एक गण या शर्धः[1] है। गण या समूह में होने पर भी सभी मरुतों का आकार एवं कार्य पूर्णतः एक से हैं। निरूक्तकार ने मरुत् शब्द की तीन प्रकार से व्याख्या की है–

''मरुतो मितराविणो व मितरोचनो वा। महद् द्रवन्ति इति वा।''[2] मित शब्द का अर्थ है योग्य, अनुरूप या सुश्लिष्ट। जो उचित प्रकार से गर्जन करते हैं वे मरुत हैं। उत्तम प्रकार से दीप्त होने के कारण भी उनको मरुत् कह सकते हैं। इधर उधर अधिक भागने के कारण भी इन्हें 'मरुत्' कहा गया है। यदि निरूक्त के मूल पाठ में 'मित' शब्द के स्थान पर अमित स्वीकार किया जाय (मरुतोऽमितराविणो वाऽमितरोचने वा) तो यास्क द्वारा बताई गई प्रथम दो व्युत्पत्तियों का अर्थ 'अत्यधिक शब्द करने वाले' या 'अत्यधिक प्रकाशित होने वाले' भी हो सकता है।

मरुतों की संख्या वैदिक संहिताओं में भिन्न–भिन्न स्थलों पर भिन्न–भिन्न है। यथा– त्रिः षष्टिस्त्वा मरुतो वावृधाना[3] ..... त्रिषष्टि 180 की संख्या का बोधक है। अन्य स्थलों पर उन्हें त्रिसप्त या 21 भी बताया गया है। अथर्ववेद में उन्हें 'त्रिषप्तासः' कहा गया है।[4] वाजसनेयी संहिता में 27 मरुतों का उल्लेख है– त्रिणवे मरुतः स्तुत्राः।[5] [6]शतपथ ब्राह्मणों में कहा गया है कि मरुतों का गण सात–सात के वर्गों में बँटा है–सप्त सप्त ही मारुतो गणः। तैत्तिरीय संहिता में इनके सात (7) वर्ग बताये गये हैं और वहाँ इनकी संख्या उनचास (49) हो जाती है।[7]

[8]'मरुत्' रूद्र के पुत्र कहे गये हैं। ऋग्वेद के एक स्थल पर इन्हें 'रूद्रस्य सूनवः' कहा गया है। इनके लिये रूद्रासः, रूद्रियाः विशेषण भी प्रयुक्त होता है।[9] इनकी माता 'पृश्नि' है, अतः इन्हें 'पृश्निमातरः' भी कहा गया है।[10] 'पृश्नि' का अर्थ है 'अनेक वर्ण वाली गाय' अतः इन्हें 'गोमातरः' भी कहा गया है।[11] सभी मरुत् समवस्क हैं। इनमें न कोई छोटा है न कोई बड़ा। 'अज्येष्ठासो अकनिष्ठास एते सं भ्रातरो वावृधुः सौभगाय।[12] इनका जन्म भी एक ही स्थान से हुआ है और इनका आवास भी एक ही है।

''शुभा सवयसः सनीला सामान्या मरुतः सं मिमिक्षुः।''[13]

मरुतों के तेज का भी प्रायः उल्लेख हुआ है। वे अग्नि व सूर्य के समान तेजस्वी है। वे अग्नि रूपी जिह्वा वाले हैं व सूर्य रूपी नेत्रों वाले हैं। अतः इनके लिये अग्निजिह्वा व सूर्यचक्षसः विशेषण प्रयुक्त किया गया हैं।[14] उन्हें अग्नि की लपटों के समान प्रकाशमान भी कहा गया है।[15] जब मरुत् पृथ्वी पर घृत की वर्षा करते हैं तब विद्युत पृथ्वी की ओर मुस्कुराती है– अव स्मयन्त मरुतः पृथिव्यां यदीं घृतं मरुतः प्रष्णुवत्ति।[16] मरुत् रूप से सजीले हैं। अलंकरण से शरीर को सुशोभित करने में रूचि रखते हैं इस कार्य में निपुण भी हैं। अलंकरण प्रियता में वे स्त्रियों के समान कहे गये हैं 'प्र ये शुम्भन्ते जनयो।'[17] वे रूप को उज्जवल करने वाले अलंकारों को धारण करते हैं–गोमातरो यंछुभयन्ते अंजिमिस् तनूषु शुभ्रा दधिरे विरूक्मतः।[18] अलंकार प्रियता के अतिरिक्त मरुत्गण वीणा वादन में भी निपुण हैं। एक स्थान पर इन्हें सौ तारों वाली वीणा को बजाने वाला बताया गया है–

धमन्तो वाणं मरुतः ..... ।[19]

इसके अतिरिक्त इनके लिये सप्तयः (सर्पणशील), शुभंयावानः (शुभगति वाले), मनवः (मननशील) इत्यादि विशेषण भी प्रयुक्त किये हैं, जो इनके स्वरूप को स्पष्ट करते हैं।

मरुतों की वीरता का वर्णन भी वैदिक संहितओं में पर्याप्त प्राप्त होता है। उनकी शक्ति का अन्त आज तक किसी ने नहीं पाया ..... न हि तु वो मरुतो आरातू चित् रावसो अन्तमापुः।[20] उनकी गर्जना सिंह की भाँति है– सिंहा इव नानदन्ति।[21] उनके प्रहार से वृक्ष पर्वत आदि भी गिर जाते हैं।[22] उनकी वृद्धि का मुख्य कारण उनका अद्भुत बल ही है, उन्होंने अपनी महिमा से स्वर्ग पर अधिकार कर लिया है– तेऽवर्धन्त स्वतवसो महित्वना नाकं तस्थुः[23] .. मरुतों के असीम पराक्रम से सभी लोक डरते हैं व इनका उग्र रूप अत्यधिक तेजवान है, जिससे इनकी ओर देखना भी सम्भव नहीं है– भयन्ते विश्वा भुवना मरुद्भ्यो राजान इव त्वेषसंदृशो नरः।[24] ऋग्वेद के एक स्थल पर उनके वीरता पूर्ण कार्यों में से एक का वर्णन इस प्रकार है– इन्द्र द्वारा मेघों को नष्ट किये जाने से जल सम्पूर्ण रूप से नीचे गिर गये। उस जल को मरूतों ने कुओं के माध्यम से ऊपर तक लाया।[25] इस प्रकार मरुतों के वीरतापूर्ण कार्यों से युक्त अनेक प्रसंग वैदिक संहिताओं में प्राप्त होते हैं।

मरुतों के वीरतापूर्ण कार्यों के प्रवाह में उनके रथ का वर्णन नितान्त आवश्यक है। उनका रथ विद्युन्मय है– आ विद्युन्मद्भिः मरुतः रथेभिः।[26]

रथों में तीव्र गति वाले घोड़े जुते हैं। इन घोड़ों के लिये रघुष्यदः विशेषण प्रयुक्त हुआ है– सप्तयो रघुष्यदी... ।[27] मरुतों क रथ मन के समान तीव्र गति वाला है, जिसमें चितकबरी घोड़ियाँ (पृषतीः) जुती रहती है। 'पृषतीः' शब्द का अर्थ हरिणियाँ लेना अधिक समीचीन होगा क्योंकि 'मनोजुवः' विशेषण घोड़ियों की अपेक्षा हरिणियों पर

अधिक जँचता है। पृषतीः शब्द का अर्थ आचार्य सायण मृगी करते हैं, परन्तु मैक्डालन ने इन्हें घोड़ियाँ (Mares) माना है। मूल तथ्य है कि रथ वेगवान है–घोड़ियों से खींचा जाता हो या हरिणियों से।

मनोजुवो यन्मरुतो रथेष्वा वृषव्रातासः पृषतीरयुग्ध्वम्।[28]

रथों के अतिरिक्त मरुत् के भालों या 'ऋष्टि' का प्रायः उनके साथ सर्वत्र उल्लेख हुआ है। ये देदीप्यमान भाले विद्युत् के ही प्रतिरूप हैं, क्योंकि ऋग्वेद में कई स्थानों पर रूपक अलंकार के रूप में 'ऋष्टिविद्युतः' शब्द आया है।[29]

मरुत्गणों का इन्द्र के सहायक रूप में भी वर्णन किया गया है। इन्द्र वृष्टि के देवता हैं व मरुत् झंझावात के देव हैं, इस दृष्टि से इन्द्र से इनकी मित्रता समीचीन ही है। वे इन्द्र के गुणों का कीर्तन करके तथा गानादि के द्वारा इन्द्र के उत्साह व शक्ति का वर्धन करते हैं।[30] वृत्र के वध में भी उन्होंने इन्द्र की सहायता की थी

वृत्रेण यदहिना बिभ्रद्रायुधा विश्वे ते इन्द्र मरुतः सहात्मना अवर्धन्।[31]

वाजसनेयी संहिता में कहा गया है कि मरुतों ने इन्द्र की वृत्रहनन व शम्बर बध में सहायता की थी। इन्द्र जी जो भी पराक्रम के कार्य करते हैं उन सबमें मरुतों का हाथ अवश्य रहता है। इन्द्र के 'मरुत्वान्', 'मरुत्सखा' इत्यादि विशेषण इन्द्र व मरुतों की मित्रता के द्योतक हैं। शुक्ल यजुर्वेद में कहा गया है कि मरुत् प्रजा हैं व वे इन्द्र का अनुगमन करते हैं ..... इन्द्रं दैवीर्विशो मरूतो अनुवर्त्मानः अभवन्।[32] इन्द्र व मरुतों की मैत्री अटूट है। इन्द्र मरुतों को बुलाते हुए कहते हैं कि तुम मेरे पास ही रहो, तुम्हारे बल से मैं वृत्र को मारूँगा।[33] ऐतरेय ब्राह्मण में मरुतों का तादात्म्य मनुष्यों की श्वास–प्रश्वास की वायु से किया गया है और मरुत् इन्द्र की मित्रता के विषय में कहा गया है कि जब इन्द्र ने वृत्र का वध किया तो सभी देवों ने उसे छोड़ दिया केवल मरुत् उस समय इन्द्र के साथ रहे। क्योंकि मरुत् श्वास–प्रश्वास हैं और ये मनुष्यों के सर्वोत्कृष्ट साथी है। उस समय भी इन्द्र उनसे युक्त रहा।

इन्द्रं वै वृत्रं जघ्निवांस नास्तृतेति मन्यमानाः सर्वा देवता अजहुः। तं मरुत एव स्वापयो नापजहुः। प्राणा वै मरुतः स्वापयः। प्राणाः हैवनं तं नाजहुः।[34]

मरुत्गणों के सोमपायी होने का भी विवरण यत्र तत्र प्राप्त होता है। इन्द्र की मित्रता को प्राप्त मरुद्गण सोमरस रूपी अन्न का उपभोग करके तृप्त होते हैं– 'सीदत्रा बर्हिरूरू वः सदस्कृतं मादयध्वं मरूतो मध्वो अन्धसः।'[35] एक अन्य स्थल पर वे सोमपान की प्रसन्नता में उत्तम दान करने वाले बताये गये हैं– धमन्तो वाणं मरुतः सुदानवो मदे सोमस्य रण्यानि चक्रिरे।[36] मरुतों के लिये 'सुदानव' विशेषण भी प्रयुक्त किया गया है। यथा–

आयं नरः सुदानवो ... धमन्तो बाणं मरुतः सुदानव

इन प्रसंगों से प्रतीत होता हे कि दानवः का अर्थ देने वाला या दानी है। अतः सुदानव का अर्थ 'अत्यधिक दानी' या 'शुभ दान देने वाला' है।

आकाश की घनघोर गर्जन–युक्त वृष्टि–प्रक्रिया से सम्बन्धित होने के कारण मरुतों का विप्लव–युद्ध से सम्बन्ध स्वाभाविक ही है। अथर्ववेद के अनेक अभिचारिक यन्त्रों में वे शत्रुनाशक रूप में आह्वाहित हैं। अथर्ववेद के तृतीय काण्ड में मरुतों से शत्रुओं की सेना के विरूद्ध लड़ने की प्रार्थना की गयी है– यूयमुग्रा मरुत ईद्वशे स्थाभि प्रेत मृगत सहध्वम्।[37] एक अन्य मंत्र में मरुतों से प्रार्थना की गयी है..... इन्द्र द्वारा अज्ञान से आवृत्त सेना को मरुत् अपनी शक्ति से नष्ट कर दें।

इन्द्रः सेनां मोहयतु मरुतो घ्नन्तु ओजसा।[38]

उपसंहार

प्रस्तुत विवरणों उद्धरणों से स्पष्ट रूप से ज्ञात होता है कि वैदिक देवों के बीच मरुद्गण विशिष्ट स्थान रखते हैं। इनका सर्वप्रथम वैशिष्ट्य तो यह है कि यह बहुवचन में स्मृत देवता–गण हैं। यद्यपि ऋक् संहिता में बहु–वचनान्त अन्य कई देव हैं। जैसे–ऋभवः, वसवः, आदित्याः, विश्वेदेवाः आदि। इनका दूसरा वैशिष्ट्य यह दिखाई देता है कि ये रूद्र, अग्नि, वायु, सोम, इन्द्र से घनिष्ठ रूप से सम्बद्ध इन्हें कहीं रूद्र का पुत्र रूद्राः या रूद्रियाः कहा गया है तो कहीं इन्हें अग्नि का पुत्र बताया गया है। अन्ततः ये इन्द्र के इतने प्रिय हो गये कि इन्द्र का 'मरुत्सखा' विशेषण परवर्ती साहित्य में भी प्रचलित रहा। संभवतः ऐसे ही वैदिक उद्धरणों से प्रेरणा प्राप्त कर कालिदास ने रघुवंश के द्वितीय सर्ग में इन्द्र के लिये 'मरुत्सखा' विशेषण प्रयुक्त किया है व दिलीप की उससे तुलना की है–

मरुत्प्रकताश्च मरुत्सखाभं तमर्च्यमारादभिवर्तमानम्।।

सन्दर्भ–ग्रन्थ–सूची

1. ऋग्वेद, 1/37/1
2. ऋग्वेद, 11/13
3. ऋग्वेद, 8/96/8
4. ऋग्वेद, 13/1/3
5. वाजसनेयी संहिता, 21/27
6. शतपथ ब्राह्मण, 2/5/1/13, 5/4/3/17, 9/3/1/25
7. तैत्तिरीय संहिता, 2/2/5
8. ऋग्वेद, 1/85/1
9. ऋग्वेद, 1/39/4, 1/38/7
10. ऋग्वेद, 1/89/7
11. ऋग्वेद, 1/85/3
12. ऋग्वेद, 5/60/5
13. ऋग्वेद, 1/165/1
14. ऋग्वेद, 1/89/7
15. ऋग्वेद, 1/78/3
16. ऋग्वेद, 1/168/8
17. ऋग्वेद, 1/85/1
18. ऋग्वेद, 1/85/2
19. ऋग्वेद, 1/85/10
20. ऋग्वेद, 1/167/9
21. ऋग्वेद, 1/64/8
22. ऋग्वेद, 1/85/1, 1/85/4
23. ऋग्वेद, 1/85/7
24. ऋग्वेद, 1/85/8
25. ऋग्वेद, 1/85/9–10
26. ऋग्वेद, 1/88/1
27. ऋग्वेद, 1/85/6
28. ऋग्वेद, 1/85/4
29. ऋग्वेद, 1/168/5
30. ऋग्वेद, 3/35/9
31. ऋग्वेद, 1/113/3
32. शुक्लयजुर्वेद–17/83

33. शतपथ ब्राह्मण–4 / 3 / 3 / 7
34. ऐतरेय ब्राह्मण–3 / 2 / 5
35. ऋग्वेद, 1 / 85 / 6
36. ऋग्वेद, 1 / 85 / 10
37. अथर्ववेद, 3 / 1 / 2
38. अथर्ववेद, 3 / 1 / 6